करना चाहता. कारण, उसे एक बंधक बाजार चाहिए. ध्यान देने की बात है कि आधुनिक राष्ट्र का विकास पूंजीवाद के समानांतर ही हुआ है. अंततः जब तक उत्पादन के साधनों पर निजी नियंत्रण रहेगा और विषमता बनी रहेगी, तब तक राष्ट्रीय सीमाओं से छुटकारा नहीं है.

इसके बावजूद यह सच है कि मानव जाति में काफी लंबे समय से राष्ट्रीयता की भावना रही है. यह सांप्रदायिकता का ही एक दूसरा नाम है. जिस तरह हर व्यक्ति को एक निजी 'स्पेस' चाहिए, उसी तरह प्रत्येक समुदाय को भी एक सम्मशयिक 'स्पेस' चाहिए. समुदाय की यह साझेदारी ही राष्ट्रीयता का उत्स है. साझेदारी की यह भावना जितनी प्रबल होगी, राष्ट्रीयता का बोध भी उतना ही तीव्र होगा. जिस तरह राष्ट्रीयता का एक स्वस्थ रूप होता है, उसी तरह उसके अनेक बीमार रूप भी होते हैं. राष्ट्रीयता की एक बीमारी विश्व हितों या किसी पड़ोसी देश से अनावश्यक अंतर्विरोध की स्थिति है. यह उग्र राष्ट्रवाद है जिसकी निकृष्टतम अभिव्यक्ति नाजीवाद में दिखाई पड़ी थी. राष्ट्रीयता की दूसरी बीमारी उपराष्ट्रीयताओं को कुचलने की इच्छा है. भारत में जब राष्ट्रीय एकता की बात की जाती है, तो उसके पीछे अक्सर यह आग्रह भी होता है. एक राष्ट्र के अंदर विभिन्न समूहों का द्वंद्व एक तीसरा रोग है, जिसमें एक समूह अपने को अधिक राष्ट्रवादी मान कर दूसरे समूहों को अवहेलित करता है या सभी युद्धरत समूह राष्ट्रीय भावबोध से वंचित रहते हैं. राष्ट्रीयता का स्वस्थ विकास सभी बीमारियों से छुटकारा पाने पर ही संभव है.

अतः 'राष्ट्रीयता क्या है?' इस प्रश्न का एक वाक्य में जवाब देना हो तो यही कहना होगा कि यह अपने राष्ट्रीय समुदाय के प्रति एक ऐसा लगाव है, जो विवेक का दामन कभी नहीं छोड़ता. इस लगाव के कारण राष्ट्र की विरासत से प्रेम बना रहता है. राष्ट्र में रहनेवाले सभी लोगों की उन्नति और उनके बीच समानता की कामना की जाती है और विवेक के कारण यह लगाव न राष्ट्र के अंदर किसी की स्वाधीनता का हरण करना चाहता है,न राष्ट्र के बाहर. राष्ट्रीयता का यह बोध ही व्यक्ति, राष्ट्र तथा विश्व का मंगल कर सकता है. बाकी हर चीज उसकी विकृति है, जो सबका नुकसान करेगी. भारत में राष्ट्रीयता के इस सहज बोध का विकास करने की जरूरत है, ताकि एकता सुदृढ़ हो सके और हम अपने सामूहिक हितों की रक्षा कर सकें. इस समय दोनों की ही हालत खस्ता नज़र आ रही है.

◆

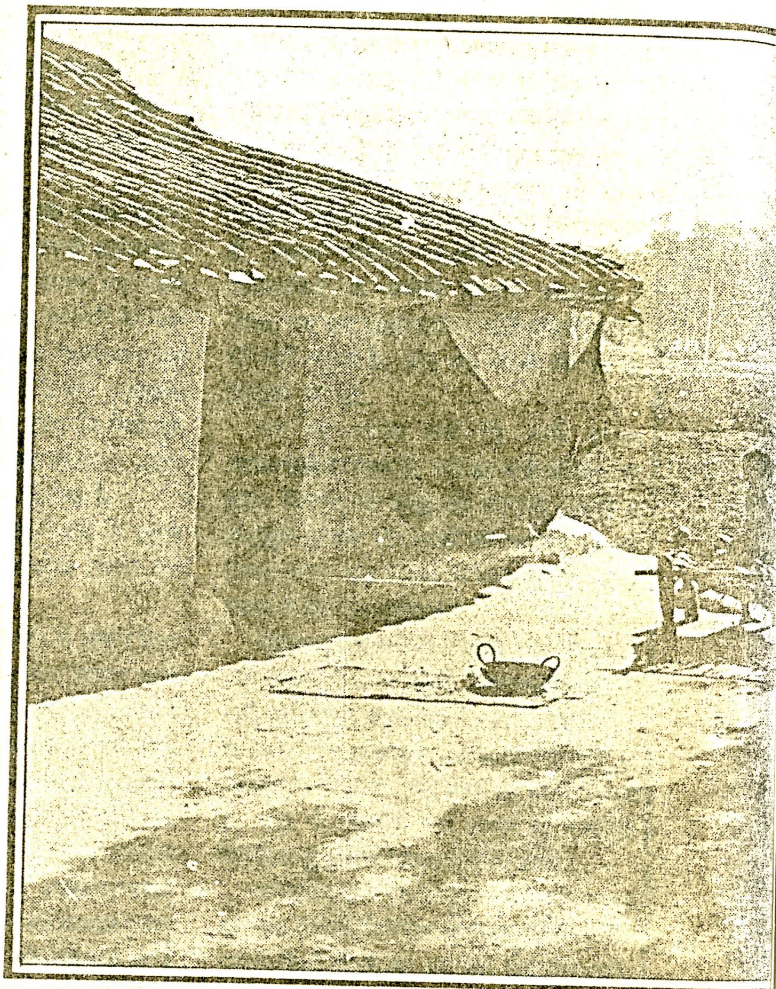

जब मनुष्य अपना घुमक्कड़ मन छोड़ कर खेती करने लगा तब समाज में अनुशासन कायम करने हेतु तथा उसकी विभिन्न इकाइयों को एक धागे में पिरोने हेतु उसने धर्म का सहारा लेने के प्रयास किया. किसी व्यक्ति के आदेश पालन करने न करने का सवाल जब खड़ा होने लगा तो ये आदेश भगवान या खुदा के नाम से या उसके पैगंबर के नाम से जारी किये जाने लगे.

राष्ट्रीयता का आज का संदर्भ

●डॉ. जयंत विष्णु नारलीकर

महाभारत का एक मशहूर किस्सा है, जब पांडव वनवास में थे तब कौरव वहां मृगया के लिये गये. पर उनका उद्देश्य था पांडवों को किसी बहाने अपमानित करना. संयोग से उनकी गंधर्वों से मुठभेड़ हुई और वे खुद ही हार कर गंधर्वों के बंदी बने. जब यह वार्ता पांडवों को मिली तब युधिष्ठिर को छोड़ बाकी सबने खुशियां मनाना प्रारंभ किया... चलो अच्छा सबक मिला अन्यायी कौरवों को. लेकिन युधिष्ठिर की भूमिका कहीं और ही रही. वे बोले–

परैः परिभवे प्राप्ते वयं पंचाधिकं इतिम्।
परस्परविरोधेतु वयं पंचैव ते शतम्।।

यानी आपसी झगड़े में हम भले ही सौ (कौरवों) के विरुद्ध पांच (पांडव) हों पर जब हम पर बाहरी (गंधर्वो का) आक्रमण होता है तब हमें मिल कर सौ अधिक पांच यानी एक सौ पांच को उनका सामना करना चाहिए. और उन्होंने भीमार्जुन को कौरवों की मुक्ति के लिये प्रेरित किया.

राष्ट्रीयता का सार इसी किस्से में है. राष्ट्र कैसे बने? भौगोलिक कारणों से एवं अपने अस्तित्व को बनाये रखने तथा उत्कर्ष साधना से प्रेरित हो मानव ने अकेले न रह कर समाज के घटक के रूप में रहना पसंद किया. यही समाज आगे चल कर एक दूसरे के निकट आ कर राज्य बने और फिर उनसे राष्ट्र. यह प्रक्रिया अभी भी जारी है. आगे चल कर विज्ञान एवं तकनीकी के प्रभाव से, यातायात की बढ़ती सुलभता से और अपने जीवन स्तर को आर्थिक सीढ़ी पर ऊपर चढ़ाने की आकांक्षा से कई राष्ट्र एक-दूसरे से अपना सहयोग बढ़ाते-बढ़ाते–एक वसुंधरा, एक राष्ट्र का चित्र साकार करेंगे इसमें कोई शक नहीं. सवाल केवल



• छाया: ताज मोहम्मद

समय का है. क्या यह अगली सदी में हो चुकेगा या बाईसवीं सदी में ?

इस भविष्य को ध्यान रखते हुए हमें आज की स्थिति का जायजा लेना है. किसी भी राष्ट्र में (और केवल भारत ही ऐसा अपवादात्मक राष्ट्र नहीं है) विभिन्न गुणधर्मो के समाज साथ-साथ रहते हैं और इस विभिन्नता से कभी-कभी संघर्ष भी पैदा होता है. 'सौ विरुद्ध पांच' के अनेक चित्र हरेक राष्ट्र में मिलेंगे. जब चार लोगों के परिवार में झगड़े होते ही हैं तो अस्सी करोड़ के राष्ट्र में क्यों न हों ? बल्कि आंतरिक संघर्ष का पूर्ण अभाव ही पूर्णतया अस्वाभाविक है.

लेकिन परिवार का ही उदाहरण और आगे बढ़ायें तो हमें और भी कुछ बोध मिलता है. सुखी परिवार में कुछ आंतरिक मतभेदों के बावजूद भी सामान्य तौर पर सहयोग की भावना रहती है. परिवार प्रमुख भले ही शिकायत करें कि श्रीमती जी हर वक्त पीछे पड़ती हैं-जाओ नहा कर आओ, सब्जी-चावल खरीद लाओ, बच्चों को डांटो... आदि, पर वे जानते हैं कि वे होम मिनिस्ट्री का कारोबार यथाशक्ति एवं कार्यक्षमता के साथ निभा रही हैं. श्रीमती जी भी मियां साहब को ताने मारें एवं बच्चों को कोसें पर उनका जी तो वहीं अटका रहता है. बच्चे भी बड़ों की डांटों के बावजूद उनके प्यार को समझते हैं. इसके विपरीत जिस परिवार में केवल अपने-अपने अधिकारों पर झगड़े होते हैं और कर्तव्यों पर ध्यान नहीं दिया जाता, वहां शांति नहीं विराजती.

राष्ट्र भी एक परिवार है जिसके प्रत्येक सदस्य के अपने अधिकार होते हैं, पर साथ ही कर्तव्य भी. दुर्भाग्य से, स्वतंत्र राष्ट्र बनते समय हम सबने केवल अधिकारों पर गौर किया, कर्तव्यों को नहीं देखा. पारतंत्र्य की शृंखला में विद्ध रहते समय हम जिन अधिकारों से वंचित रहे वे हमें आकर्षक प्रतीत हुए. पर हमने यह नहीं देखा कि स्वतंत्रता प्राप्ति-पश्चात अब राष्ट्र की धुरी लंदन का अंग्रेज नहीं निभायेगा—वह अब हमारे कंधों पर है.

राष्ट्रीयता का आज का संदर्भ हमें दो प्रमुख बातों की याद दिलाता है– राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र के प्रति कर्तव्यपरायणता.

परैः परिभवे प्राप्ते... जब बाहर से हमला होता है तब हम सब मिलजुल कर उसका सामना करते हैं. पर हमले केवल फौज या हवाई जहाज से नहीं होते. सेना के हमलों का मुकाबला करना एक तरह से अधिक सरल है क्योंकि हमें खतरा स्पष्ट रूप से सामने नजर आता है. अधिक कठिनाई उन खतरों के मुकाबले में आती है जो छिपे-छिपे या अप्रत्यक्ष रूप से हमें नुकसान पहुंचाते हैं. आक्रामक हवाई जहाज बम गिरा कर अपने खतरे को तत्काल स्पष्ट कर देता है जबकि ये अस्पष्ट एवं अप्रत्यक्ष खतरे दीमक की तरह राष्ट्र को धीरे-धीरे कमजोर बनाते हैं. कभी-कभी दीमक हमें बहुत देरी से दिखाई देती है जब वक्त हाथ से निकल चुका होता है. देखें इस दीमक के कुछ रूप !

आज 'सांप्रदायिकता' एक बुरा शब्द माना जाता है. धर्मों की, संप्रदायों की शुरुआत अच्छे उद्देश्यों से हुई कि समाज कल्याण के कुछ नियम बनें और व्यक्ति को मानसिक शांति मिले. पर आज उनका प्रयोग आपसी झगड़े बढ़ाने में होता है. धर्मांधता के दुष्परिणाम हम आयलैंड, युगोस्लाविया, मध्यपूर्व आदि में पिछले बीस वर्षो से ले कर आज तक देखते आये हैं. ''धारयति इति धर्मः'' जो धारण करे वह धर्म; आज धर्म के नाम पर रचनात्मक कार्यो के बजाय विध्वंस क्यों हो रहा है ? क्या यह राष्ट्रीयता की पराजय नहीं ?

'भ्रष्टाचार' राष्ट्रीयता पर दूसरा हमला है जिसका सामना हम नहीं कर पा रहे हैं. यदि प्रत्येक व्यक्ति का कोई दायित्व है तो उसे निभाने के लिए घूसखोरी क्यों ? फुटपाथ पर बिक्री करनेवाले से ले कर राष्ट्रीय परियोजनाओं के कांट्रैक्ट तक, पांच रुपये से पांच अरब तक, सामाजिक नीति पर होनेवाले ये हमले आज राष्ट्र को जर्जर बना रहे हैं. अगर हरेक व्यक्ति अपना ही स्वार्थ देखे तो राष्ट्रहित का दायित्व किस पर रहेगा ?

राष्ट्रीयता पर तीसरा हमला है 'अंधश्रद्धा' का. राष्ट्र को वैभवशाली बनाने के लिए उपाय मौजूद हैं. साधन सामग्री उपलब्ध है. अभाव है इच्छाशक्ति का. क्योंकि पुरातन परंपराओं में जकड़ा यह राष्ट्र इक्कीसवीं तो छोड़ें बीसवीं सदी में भी नहीं पहुंचा है. चाहे वह किसी भी धर्म या संप्रदाय का हो.

यह भी उचित नहीं कि सभी पुरातन आचारसंहिता गलत है. हमें करना है नीरक्षीर भेद पुराने विचारों को आज की बदलती स्थिति के अनुकूल ढालना और बाकी को त्यागना एवं नये विचार लाना. यह सीखने के लिए एक आवश्यक साधन है वैज्ञानिक दृष्टिकोण.

विज्ञान एवं तकनीकी के बढ़ते प्रभाव के कारण माहौल तेजी से बदल रहा है. विज्ञान-तकनीकी के सभी आविष्कार कल्याणकारी नहीं हैं. राष्ट्रोन्नति के लिए नये आविष्कार आवश्यक होते हुए भी उनका दूरगामी असर क्या होगा यह जानना जरूरी है. यहां भी नीरक्षीर भेद करना है, यहां भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण फलदायी सिद्ध होगा.

यह सर्वमान्य है कि राष्ट्रीय एकता का अभाव इस बात के लिये जिम्मेदार था कि मुट्ठी भर अंग्रेज हजारों मीलों दूर से आ कर यहां राज जमा सके. लेकिन अंग्रेजों के पास एक ऐसा जबर्दस्त साधन था जो हमारे पास नहीं था. औद्योगिक क्रांति ने उन्हें विज्ञान एवं तकनीकी के फल दिये. वहां न्यूटन से फैराडे तक विज्ञान की नयी परंपरा बनी, जेम्स वॉट एवं स्टीवंसन ने तकनीकी का रास्ता दिखाया. हमारे यहां ताजमहल बना, तानसेन का संगीत पनपा, पर, हाय, विज्ञान का पौधा कोई न लगा सका !

वह पौधा अंग्रेजों ने ही यहां लगाया (मुझे यहां आधुनिक विज्ञान से ताल्लुक है, उस प्राचीन परंपरा से नहीं जो भास्कराचार्य के बाद नहीं रही.) आज उस पौधे का वृक्ष बना है. एक विचारधारा आज भी है कि इस वृक्ष का क्या प्रयोजन, यह महंगा है क्यों न इसकी निगरानी करना छोड़ दें ? इससे घातक विचारधारा आज कोई नहीं हो सकती. क्या हम इतिहास से कोई सबक नहीं सीख सकते ?

◆